^Hkke*

Hkkx &ûú

vkihu vki lkftvk vkihu jfpvk ukm AA
n;h dnjfr lkth, dfj vkl.k fMBk pkm AA (i- þöý)

xjck.kh dh mijkDr ifDr vulkj vdky i:"k u bl ek;k d ^fojkV ukVd* vFkok **^ekf;dh eMy* dh jpuk dh vkj viu ^vki* dk foLrkj fd;k** A

ftl rjg l; dk foLrkj] mle l fudyh fdj.kk }kjk gkrk g A mlh rjg **vdky i:"k d T;kfr&Lo:ih ^vki* e l b'ojh; fdj.kk dk foLrkj gvk**] ftl dk ^'kcn*] ^uke*] ^gDe* vkfn 'kCnk l xjck.kh e n'kk;k x;k g A

ukud jpuk ifHk jph cg fcf/ vfud idkj AA (i- ü÷ÿ)

vfud Hkkfr gkb ilfjvk ukud ,ddk# AA (i- üöö)

ekf;dh ^fojkV ukVd* d vuUr ukVd dh idfr vkj iofr d fy, **^'kcn* vFkok ^uke* dh jpuk gb** A bl vuUr b'ojh; ^jpuk* vFkok ^ukVd* dk pyku d fy, vdky i:"k u **^=kfVghu* vkj vikj ^gDe* jpk** A

bl rjg ge **84 yk[k** ;kfu;k d ^tho* bl ^xlr*] ^=kfVghu* vkj ^vVy* gDe vulkj bl b'ojh; jpuk d vikj ,o vxkpj **^ukVd* d fgLlnkj g** A

dkB dh irjh dgk dj cijh f[kykougkjk tku AA
tlk Hk[k djko ckthx# vkg rlk gh lkt vku AA (i- üúö)

bl lf"V d lHkh tho **^Hke*** vFkok **^vKkurk* d ^v/ xckj* e gh ioRr g** A blh Hke&e;h ^vge* e gh tho &

lkpr g
de djr g
urht Hkkxr g
^/e* /kj.k djr g
Hktu&cnxh djr g
ti&ri djr g
n[k&l[k Hkkxr g
vkokxeu d pDdj e iMr g A

tg vkfi jfpvk ijip vdk# AA frg x.k efg dhuk fcLFkk# AA
iki iu rg Hkb dgkor AA dkÅ ujd dkÅ ljx cNkor AA
vky tky ekbvk t tky AA gme ekg Hkje Hk Hkkj AA
n[k l[k eku vieku AA vfud idkj dhvk c[kku AA
vkiu [ky vkfi dfj n[k AA [ky ldkp rm ukud ,d AA (i- üöü)

bg ekbvk ftr gfj folj
ekg mit Hkkm ntk ykbvk AA (i- öüû)

nlj 'kCnk e ^tho* dk vge e;h iFkd vkfLrRo blh vKkurk d ^Hke x<* e ioÙk gkdj vkokxeu d pØ e iMk jgrk g A

भरमै आवै भरमे जाइ ॥
इहु जगु जनमिआ दूजै भाइ ॥
मनमुखि न चेतै आवै जाइ ॥ (पृ. १६१)

दूजै भाइ परपंचि लागे ॥
आवहि जावहि मरहि अभागे ॥ (पृ. ८४२)

जब तक 'जीव' द्वी भाव अथवा **'अहम के भ्रम' में विचरण करता है**, वह अकाल पुरूष की आत्मिक कृपा, **बख्शिशों एवं बरकतों से वंचित रहता है और** **'जो मैं कीआ सो मैं पाइआ'** d vVy fu;e vulkj viu dek nokjk **n[k&l[k Hkkxrk g** A

Hkje Hkyk n[k ?k.kk te ekfj dj [kygku AA (i- üû)

nt Hkkb lnk n[k ik, Ë x.k Hkjfe Hkykbnk AA (i- ûúöö)

bl rjg **^idfr* d lkj thok dk leLr thou gh vge dh vKkurk d ^v/ xckj* e xtjrk g** A

ijr vk'p; okyh ckr g] fd ge **mijkDr vVy lPpkb dk fopkju] le>u] phUgu vkj ekuu d fy, dnkfpr r;kj ugh g vkj ge bldh vko';drk Hkh irhr ugh gkrh** A

viuh **,lh vKku&e;h n'kk d fo"k; e iNrkok djuk] rkck djuk] ^vkg* Hkjuh vkj yfTtr gkuk rk dgk jgk** !!

bl **^f} Hkko* d Hke&e;h thou dk** &

l/kju

cnyu

iyVu

Åpk mBku

dk [;ky Hkh ugh vk;k !!!

bl dk dkj.k ;g g] fd ge tUek&tUek l **^dM Hke x<*** vFkok **^vge e gh thr&ejr vkj iORr gkr vk, g**] vkj ;g ^Hke* gekjh ^idfr* vFkok **^vrdj.k* dk vfHkÂ vx** vFkok **^thou&vk/kj* ;k ^thou&:i* gh cu x;k g** A

gm fofp vkbvk gm fofp xbvk AA
gm fofp tfevk gm fofp evk AA (i- þöö)

bUlku d **^भ्रम'** का कारण अथवा आधार उस का **'अह्म'** ही है और यह अह्म ही इन्सान को अपने **भ्रम – भुलाव की गलती मानने से रोकता है** । इसी कारण हमें अपने **'भ्रम – मयी जीवन' की सूझ या ज्ञान** नहीं होता ।

परंतु गुरबाणी में दर्शाए **'भ्रम', 'अँध गुबार' और 'भ्रम गढ़' को हम अपने ऊपर लागू करने के लिए तैयार नहीं** अथवा अहसास ही नहीं करते ।

अपनी भ्रम मयी अज्ञानता को न मानना अथवा अहसास न करना ही, इन्सान का दीर्घ, भूल और मौलिक –

भ्रम – भुलाव है
अपने आपे के साथ धोखा है
अहम की ढिठाई है
भोले भाव पाखंड है,

जिस का नतीजा गुरबाणी में यूँ दर्शाया गया है –

बजर कपाट काइआ गड़् भीतरि कूड़ु कुसतु अभिमानी ॥
भरमि भूले नदरि न आवनी मनमुख अंधा अगिआनी ॥ (पृ –५१४)

अंधा जगतु अंधु वरतारा बाझु गुरू गुबारा ॥ (पृ –६००)

सगल जनम भरम ही भरम खोइओ नह असथिरु मति पाई ॥
बिखिआसकत रहिओ निस बासुर नह छूटी अधमाई ॥ (पृ. ६३२)

ऐसे भरमि भुले संसारा ॥
जनमु पदारथु खोइ गवारा ॥ (पृ. ६७६)

कलिजुग महि घोर अंधारु है मनमुख राहु न कोइ ॥ (पृ १२८५)

उपरोक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि यह **'भ्रम'** सगल जगत अथवा संसार को भूत–प्रेत की तरह चिपका हुआ है । ijr ge viuh **vge dh f<Bkb e ;g le> g, g** fd ge rk bl **^lxy lalkj*** vFkok ^lHk txr* **ls fHkUu vkj ckgj g** A bl fy, **;g ^Hke* ge N ugh ldrk !!**

ijr lPpkb rk ;g g fd **lkjh ;kfu;k vkj ge Hkh bl ^Hkex<* d v/j&[kkr e xkr [kk jg g** vkj blh e /Ddk&eDdh [kkr] iyp&iyp dj viuk veY; thou 0;Fk xok jg g A

Mhxu Mkyk rÅ ym tm eu d Hkjek AA (i· þúú)

eue[k v/ dj prjkb AA Hkk.kk u eu cgr n[k ikb AA
Hkje Hkyk vko tk, ?k# egy u dcg ikbnk AA (i· ûúöþ)

,l ekufld Hke e xflr g,] thok dk xjck.kh e eue[k dgk x;k g &

Hkjfe Hkyk.k fl eue[k dghvfg uk mjokfj u ikj AA (i· ÷ö÷)

vuy okm Hkjfe Hkykb AA ekbvk ekfg lf/ u dkb AA
eue[k v/ fdN u l> xjefr uke ixkIh g AA (i- ûúþø)

euef[k v/y xjefr u Hkkb AA
il Hk, vfHkeku u tkb AA (i- ûûöú)

ge viu eu e bekunkjh l tkp&iMrky vFkok fopkj djuh g] fd ge bu **eue[kk dh J.kh e rk ugh vkr **

lkjk llkj gh bl Hke&e;h f} Hkko e vuUr tUek l ^iyfp&iyfp lxyh gb >B // ekg* e **ioUk gkdj viuk veY; tUe 0;Fk xok jgk g** A

gm gm djrh lHk eb lir fdl u ukfy AA
nt Hkkb n[k ikbvk lHk tkgh tedkfy AA (i- øþ)

bg tx ekbvk ekfg fovkfivk nt Hkjfe Hkykb AA (i- þýú)

bg txr eerk evk tho.k dh fcf/ ukfg AA (i- ÿúø)

txr vfxvkuh v/ g nt Hkkb dje dekb AA
nt Hkkb tr dje dj n[k yx rfu /kb AA (i- ÿöý)

साधो इहु जगु भरम भुलाना ॥
राम राम का सिमरनु छोडिआ माइआ हाथि बिकाना ॥ (पृ. ६८४)

^tho* d bl Hke&e;h thou d fo"k; e vkfn l gh x:] vorkj] HkDr] lr] egki:"k rkMuk djr vk, g vkj bl l cpu vkj ^dY;k.k* dk min'k Hkh nr vk, g A

ijr vk'p; okyh ckr g fd bl **^Hke&e;h* ^tkn* dk bruk rho vkj xgjk ^vlj* ^eu"; ;kfu* ij gk jgk g fd &**

x:vk vorkjk d min'k
egki:"kk d thou
vuUr /e ipkj d gkr g,
/kfed de&fØ;k djr g,
lr lxfr djr g,
ikB&itk djr g,
fQykLlfQ;k ?kkVr g,
gB&/e d d"V Hkkxr g,

;kx vH;kl djr g,
lekf/ ;k e tMr g,
i.;&nku djr g,
rhFk ;k=kk djr g,

Hkh eu"; dk viuh Hke&e;h&vKkurk d fo"k; e l> ugh vkb !!

bl rjg bUlku viuh **^vge dh f<Bkb*** e cijokg vkj ykijokg gkdj] viu ijku ekf;dh **Hke&e;h thou&cgko e crgk'kk cgrk tk jgk g** A

cfYd bl ^Hke x<* d ^अँध गुबार' में विचरण करते हुए **अपनी मायिकी प्राप्तियाँ और दिमागी ज्ञान के आधार पर अपने आप –**

भला–भद्र
ज्ञानी–ध्यानी
महापुरूष
योगी
जपी–तपी
श्री १०८ (108)

आदि, झूठी बढ़ाइयों कारण 'अकड़ा' फिरता है ।

केवल **'इन्सानी योनि' ही अपनी तीक्षण बुद्धि के कारण** अहम की अज्ञानता के घोर अँधकार में ग्रसित होकर **पलच–पलच के दुखी हो रहा है ।** अन्य सभी 84 लाख योनियाँ अपने कर्ता अकाल पुरूष के **'हुकमि रजाई चलणा'** के उपदेश को अनजाने ही कमा रही हैं और **अपने ईश्वरीय सागर की तरफ भोले भाव ही 'सरक' रही हैं ।**

इन्सानी योनि को अकाल पुरूष ने **अपने स्वरूप** में बनाकर तीक्षण बुद्धि और आज़ादी बख्शी है ताँकि वह इस तीक्षण बुद्धि से अपने कर्ता **अकाल पुरूष को चीन्ह और पहचान कर 'हुक्म' को बूझ कर, 'हुकमि रजाई चलणा' के उपदेश को पूर्ण चेतनता से 'कमा' सके ।**

परंतु इन्सान अपने अह्म में **मायिकी चमत्कारों** अथवा 'विराट नाटक' के भुलाव में इतना **ग्रसित और मदहोश** हो चुका है, कि वह **'हुक्मी'** और उसके **'हुक्म' से बिल्कुल अनजान और विमुख हो गया है ।**

झूठी माइआ देखि कै भूला रे मना ।। (पृ. ४८६)

आसा भरम बिकार मोह इन महि लोभाना ।।
झूठु समग्री मनि वसी पारब्रहमु न जाना ।। (पृ. ८१५)

वसतु पराई कउ उठि रोवै ।। करम धरम सगला ई खोवै ।।
हुकमु न बूझै आवण जाणे ।। पाप करै ता पछोताणे ।। (पृ. ६७६)

इस तरह अकाल पुरूष और उसके हुक्म को **'भूलना' अथवा उस से 'विमुख' होना ही** मनुष्य योनि का **मूल और दीर्घ भ्रम – भुलाव है ।**

इस तरह मनुष्य योनि ने बख्शी हुई तीक्षण बुद्धि और आज़ादी का **अनुचित और गलत इस्तेमाल** (misuse) **किया है –** जिस कारण उस का जीवन अह्ममयी भ्रम में कर्मबद्ध होकर आवागमन के **ना समाप्त होने वाले चक्र** में पड़ जाता है और **परिणाम भोगता रहता है ।**

इस लेख के पिछले भागों में बताया जा चुका है, कि **'प्रभु' की सृष्टि में दो विलक्षण मंडल हैं –**

1. आत्मिक प्रकाश का सच्चा मंडल अथवा 'सच खंड'।
2. मायिकी अँधकार का झूठा 'भ्रम गढ़' है।

आत्मिक मंडल तो अनुभवी देश का प्रकाश मंडल है, जिसमें अकाल पुरूष स्वयं और उसके बख्शे हुए अवतार, गुरू, भक्त, सेवक, हरिजन, गुरमुख, साध संत **शोभायमान हैं ।**

मायिकी मंडल के 'भ्रम गढ़' की अपनी कोई हस्ती नही है, क्यों कि 'आत्म प्रकाश' अथवा **'नाम' की अनुपस्थिति से ही हर किस्म के 'मानसिक भ्रम' उत्पन्न होते हैं,** जिस में त्रि – गुणी मायिकी मंडल के सारे 'जीव', मनुष्य सहित, प्रवृत्त हैं।

दूसरे शब्दोंमेंइस भ्रम – मयी मायिकी मंडल में84 लाख योनियोंके इलावा देवी – देवते, योगी, जपी – तपी – हठी भी शामिल हैं –

भरमे सुरि नर देवी देवा ।।

भरमे सिध साधिक ब्रहमेवा ।।
भरमि भरमि मानुरव डहकाए ।।
दुतर महा बिरवम इह माए ।। (पृ. २५८)

ब्रहमा बिसनु महेसु त्रै मूरति तृगुणि भरमि भुलाई ।। (पृ. ६०६)

ब्रहमा बिसनु महादेउ त्रै गुण भूले हउमै मोहु वधाइआ ।। पंडित पड़ि पड़ि मोनी भूले दमजै भाइ चितु लाइआ ।। जोगी जंगम संनिआसी भुले विणु गुर ततु न पाइआ ।। (पृ. ८५२)

उपरोक्त विचारों का निचोड़ यह निकलता है कि त्रि गुणी मायिकी मंडल में विचरण करने और प्रवृत्त होने वाले 'जीव', 'इन्सान' और 'देवी – देवते' सम्पूर्ण रूप से **मायिकी भ्रम गढ़ के वासी हैं** और इसमें ही पलच – पलच कर अपना जीवन व्यर्थ गवाँ रहे हैं ।

परंतु बड़ी अनोरवी बात तो यह है कि इतनी तीक्षण बुद्धि के होते हुए भी मनुष्य योनि को अपने ' भ्रम मयी – जीवन' की सूझ नहीं हुई ।

हम में से कोई भी **यह मानने को तैयार नहीं है कि हम 'भ्रम – गढ़' के 'कूड़ मंडल' में ग्रसित हैं**, बल्कि इसी भ्रम – मयी अँध गुबार के आसरे ही अपना जीवन व्यर्थ गवाँ रहे हैं और गुरूओं, महापुरूषों, संतों, भक्तों के **उपदेशों को 'छींके पर टाँग' कर अपनी झूठी और खोखली सयानप घोट कर अकड़े रहते हैं ।**

जब हम अह्म, दूसरा भाव, भ्रम, भ्रम गढ़, अज्ञानता और अँध गुबार, आदि शब्द **पढ़ते या सुनते** हैं, तो हमें यह निश्चय होता है कि यह शब्द हमारे ऊपर **नहीं लागू होते क्यों कि हम तो बड़े –**

सयाने
ज्ञानी
ध्यानी
विद्वान
विज्ञानी
दर्शानिक

अफलातून
आधुनिक (modern)
सभ्य (civilized)

हैं !! यह शब्द **तो और किसी –**

अनपढ़
अज्ञानी
मूर्ख
पिछड़े हुए
जंगली

मनुष्य के लिए उच्चारित किये होंगे ।

इस तरह हमारा 'पारवंड' अथवा 'अह्म की ढिठाई' **उपजती है** और हमारी दिमागी सयानप, ज्ञान, बढ़ाई और भली – भद्र **झूठी हस्ती को ठेस लगती है ।**

यदि हमारे मन पर इन शब्दों का कोई असर होता भी है, तो वह भी **'ऊपरी सा'** – जो जल्द ही अलोप हो जाता है और हम पुनः अपने दृढ़ हुए 'अह्म' के 'भ्रम – मयी' जीवन के प्रवाह में बह जाते हैं ।

गुरबाणी में दर्शायी भ्रम – मयी अज्ञानता के विषय में ज्ञान घोटने को ही **दिमागी कर्म बना दिया है**, क्यों कि हमें इन उपदेशों की सच्चाई पर **पूर्ण निश्चय नहीं होता**, केवल ऊपरे से मन द्वारा ही 'स्वीकारते' हैं । इस तरह हम अपने **'आप' के साथ धोखा करते हैं ।**

परंतु यह अह्म – रूपी **भ्रम** 'भूत – प्रेत' की तरह जीव को ऐसा चिपका हुआ है, कि हमारे जीवन के हर पक्ष में, अपनी 'रंगत' अथवा 'भाव' का असर –

उठते
बैठते
सोते
जागते

अथवा हर पल सम्पूर्ण जीवन पर छाया रहता है ।

उपरोक्त विचारों से स्पष्ट है कि हमारे **भ्रम का 'मूल' या 'बीज' हमारे अह्म की भावना ही है**, जो हमारी मैं – मेरी द्वारा प्रकट और प्रवृत्त हो रही है ।

हउमै सभु सरीरु है हउमै ओपति होइ ॥

हउमै वडा गुबारु है हउमै विचि बुझि न सकै कोइ ॥ (पृ. ५६०)

हउमै मेरा भरमै संसारु ॥ (पृ. ८४१)

हमारा यह **मानसिक 'भ्रम'** आत्मिक प्रकाश की **अनुपस्थिति से उत्पन्न और प्रवृत्त होता है ।**

जब तक **रोशनी न आए** उतने समय तक अँधकार के भ्रम का ही बोलबाला एवं व्यवहार रहता है ।

इसी तरह **'आत्मिक प्रकाश'** अथवा **'नाम' के प्रज्वलित हुए बिना हमारा अह्म रूपी 'भ्रम' कदाचित दूर नहीं हो सकता ।**

जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई ॥ (पृ. ६८४)

बिनु नावै सभि भरमहि काचे ॥ (पृ. ८४२)

बिनु नावै भ्रमि भ्रमि भ्रमि खपिआ ॥ (पृ. ११४०)

परविरति मारगु जेता किछु होइऐ तेता लोग पचारा ॥
जउ लउ रिदै नही परगासा तउ लउ अंध अंधारा ॥ (पृ. १२०५)

इस भ्रम का कोई **स्थूल अस्तित्व नहीं** – बल्कि यह अह्म–रूपी 'भ्रम' तो हमारे मन के –

ख्यालों
निश्चयों
मनोभावों
भावनाओं

की 'रंगत' अथवा 'भ्रम' है, जो हमारे अन्तर्गत– मन, बुद्धि चित्त और अंतःकरण में जन्मों–जन्मों से दृढ़ हो चुका है ।

अनिक जनम बीतीअन भरमाई ॥
घरि वासु न देवै दुतर माई ॥
दिनु रैनि अपना कीआ पाई ॥
किसु दोसु न दीजै किरतु भवाई ॥ (पृ. ७४५)

'अँधेरा' अपने अँधकार को स्वयं दूर नहीं कर सकता । इसी तरह जीव की जन्मों–जन्मों से दृढ़ हुई भ्रम–मयी अज्ञानता **को हमारे 'अह्म की भावना' अथवा 'द्वैत भाव' में किए –**

कर्म–धर्म

पाठ–पूजा
जप–तप
पुण्य–दान
नेकियाँ–परोपकार

आदि हमारे मानसिक अँध गुबार अथवा 'भ्रम गढ़' को तोड़ नहीं सकते ।

अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास ।। (पृ. ३४६)

पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम अनेका ।। (पृ. ६४१)

अनिक जतन गवनु करउ ।।
खटु करम जुगति धिआनु धरउ ।।
उपाव सगल करि हारिओ नह नह हुटहि बिकराल ।। (पृ. १११६)

यह अह्ममयी नेकियाँ और कर्म–कांड, त्रै–गुणी मायिकी मंडल के 'भ्रम–गढ़' के 'करतब' हैं तथा यह हमारी सीमित बुद्धि के दायरे में ही हैं ।

यह अह्म वाली 'भावना' से किए कर्मों की 'आधयात्मिक मंडल' तक पहुँच नहीं है–

कोटि करम करै हउ धारे ।। स्रम पावै सगले बिरथारे ।।
अनिक तपसिआ करे अहंकार ।। नरक सुरग फिरि फिरि अवतार ।।
अनिक जतन करि आतम नही द्रवै ।।
हरि दरगह कहु कैसे गवै ।। (पृ. २७८)

पूजा अरचा बंदन डंडउत खटु करमा रतु रहता ।।
हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलीऐ इह जुगता ।। (पृ. ६४२)

जेते रे तीरथ नाए अंहबुधि मैलु लाए ।।
नानक निहफलु जात तिह जिउ कुंचर इसनानु ।। (पृ. १४२८)

नाम संगि मनि प्रीति न लावै ।।
कोटि करम करतो नरकि जावै ।। (पृ. २४०)

यह भ्रम–गढ़ का 'विराट नाटक' अथवा त्रि–गुणी मायिकी मंडल कोई स्थूल टापू, देश, ग्रह आदि नहीं है ।

इस की 'हस्ती' तो हमारे –

ख्यालों

मनोभावों
निश्चयों
भावनाओं
मन
बुद्धि
अंतःकरण

अथवा हमारी सूक्ष्म मानसिक अवस्था का विषय है ।

इस लिए भ्रम–गढ़ की अज्ञानता के अँधकार को दूर करने के लिए हमें अपने ख्यालों, भावनाओं, निश्चयों को बदलना पड़ेगा ।

यह परिवर्तन केवल उच्च–पवित्र **'साध–संगति'** में विचरण करते हुए 'सिमरन' द्वारा ही हो सकता है –

हरि सिमरत पूरन पदु पाइआ ॥
साधसंगि भै भरम मिटाइआ ॥ (पृ. १६३)

साधसंगि मिटे भरम अंधारे ॥
नानक मेली सिरजणहारे ॥ (पृ. ३८६)

माया मोह भरम पै भूले सुत दारा सिउ प्रीति लगाई ॥
इकु उतम पंथु सुनिओ गुर संगति
तिह मिलंत जम त्रास मिटाई ॥ (पृ. १४०६)

खट्टे बेरों की बेरी को यदि मीठे बेरों वाली **'कलम' लगा दें**, तो उसके बेर भी 'मीठे' हो जाते हैं ।

इसी तरह भ्रम–मयी अज्ञानी मन को यदि सच्ची–पवित्र **आत्मिक 'साध संगति' की 'कलम' लगाई जाए**, तो वह मन 'उनमन' हो जाएगा ।

इस तरह हमारे मन, बुद्धि और अंतःकरण पर **'साध संगति'** द्वारा अध्यात्मिक ज्ञान की **'कलम' लगाने पर 'मन'–'उनमन' हो जाता है अथवा मनमुख से गुरमुख हो जाता है और गुरमुख से ब्रहम ज्ञानी बन जाता है ।**

जिस तरह सूरज के प्रकट होने से पहले **'पोह–फूटती'** है और हल्का सा प्रकाश हो जाता है– उसी तरह अन्तरात्मा में **'पोह–फूटने' पर 'आत्मिक**

रोशनी' में हमारा **मन–बुद्धि–चित्त 'आत्म–परायण' होकर विकसित और प्रकाशित होता जाएगा ।**

इस तरह धीरे–धीरे हमारी –

अहम् की 'भावना'
द्वि भाव का निश्चय
मानसिक अज्ञानता
अज्ञानता का भ्रम
भ्रम का अँध गुबार
अँध गुबार का भ्रम–भुलाव

का 'आवरण' कम और पतला होता जायेगा ।

इस तरह दामनिक **अध्यात्मिक 'कलम' के प्रभाव अधीन हमारे 'उनमन' के अनुभव में आत्मिक प्रकाश की झलकें दिखायी देंगी** और किसी भाग्य भरे 'क्षप' में गुरप्रसाद द्वारा –

आत्मिक प्रकाश होगा
'शबद' का प्रकाश होगा
'नाम' प्रज्वलित होगा
गोबिन्द 'गज' पड़ेगा ।

हमारा भरमु गइआ भउ भागा ।।
राम नाम चितु लागा ।। (पृ. ६५५)

जिस तरह खट्टे बेरों वाली 'बेरी'– मीठे बेरों वाली बेरी के साथ **संगति करके,** स्वयं भी मीठी हो जाती है, उसी तरह **'मनमुख' का मन– 'गुरमुख' के उनमन के साथ 'परस' कर अथवा संगति करके स्वयं 'उनमन' अथवा ऊँचा होकर गुरू की तरफ ध्यान अथवा 'मुख' करता है** । ऐसे 'उनमन' अथवा **'गुरमुख मन' पर** –

माया के भ्रम का असर कम होता जाता है ।
माया का 'भ्रम–गढ़' टूटता जाता है ।
मन एकाग्र होता जाता है ।
मन में आत्मिक आकर्षण अथवा 'भूख' पैदा होती है ।
एकाग्र हुआ मन सिमरन में जुड़ता है ।
सिमरन दृढ़ होता जाता है ।

सतगुरू के साथ प्रेम डोर पड़ जाती है ।
इस प्रीत – डोर का आकर्षण बढ़ता जाता है ।
अनहद धुनि सुनाई देती है ।
अनहद धुनि अथवा 'चुप – प्रीत' में मन 'अलमस्त मतवारा' हो जाता है ।
आत्म – प्रकाश में निवास होता है ।

प्रेम के सर लागे तन भीतरि ता भ्रमु काटिआ जाई ।। (पृ. ६०७)

साधसंगि भै भरम मिटाइआ ।। (पृ. १६३)

साध कै संगि न कतहूं धावै ।।
साधसंगि असथिति मनु पावै ।। (पृ. २७१)

अगिआनु अधेरा संती काटिआ जीअ दानु गुर दैणी ।। (पृ. ५३०)

गोबिंद गोबिंद गोबिंद मई ।।
जब ते भेटे साध दइआरा तब ते दुरमति दूरि भई ।। (पृ. ८२२)

संतसंग जिह रिद बसिओ नानक ते न भ्रमे ।। (पृ. २५८)

इस अमूल्य – आश्चर्यजनक – आत्मिक प्रकाश की उच्च, उत्तम, पवित्र **'गुरमुख अवस्था'** को गुरबाणी में यूँ दर्शाया है –

फूटो आँडा भरम का मनहि भइओ परगासु ।।
काटी बेरी पगह ते गुरि कीनी बंदि खलासु ।। (पृ. १००२)

अपुसट बात ते भई सीधरी दूत दुसट सजनई ।।
अंधकार महि रतनु प्रगासिओ मलीन बुधि हछनई ।। (पृ. ४०२)

अह्म की भ्रम – मयी **अज्ञानता के 'भ्रम – गढ़' में से निकलकर, 'मन' का अनुभवी आत्मिक – प्रकाश – मंडल में प्रवेश होना –**

अलौकिक मानसिक परिवर्तन है
आत्मिक करामात है
ईश्वरीय कौतुक है
ईश्वरीय चमत्कार है
आश्चर्यजनक करिश्मा है
गुप्त प्रेम खेल है
आत्मिक आदान प्रदान है

गुप्त वाणिज्य – व्यापार है
'अजीब वरवर' है

यह अमूल्य और आश्चर्यजनक आत्मिक 'देन' सतगुरू के दर – घर से –

कृपा है
रहमत है
बख्शिश है
'नदरि करमु' है

साध संगति में गुरप्रसादि द्वारा बाँटी जाती है ।

यह आत्मि – मंजिल की विस्मादमयी, आश्चर्यजनक, **'चमत्कारी'**, ईश्वरीय **कौतुक**, हमारी मायिकी सीमित बुद्धी की समझ और 'पकड़' से दूर हैं । इस ईश्वरीय 'प्रेम – खेल' को **केवल 'अनुभव' द्वारा ही पहचाना और अनुभव किया जा सकता है ।**

आत्मिक – मंडल की इस आश्चर्यजनक प्रेम खेल को भ्रम – मयी मानसिक सीमित बुद्धि द्वारा समझने की कोशिश करनी ही हमारा दीर्घ मानसिक भ्रम – भुलाव है ।

गिआनु धिआनु सभु कोई रवै ।।
बाँधनि बाँधिआ सभु जगु भवै ।। (पृ. ७२८)

कथनी कहि भरमु न जाई ।।
सभ कथि कथि रही लुकाई ।। (पृ. ६५५)

गिआनु गिआनु कथै सभु कोई ।।
कथि कथि बादु करे दुखु होई ।। (पृ. ८३१)

नाम बिना किआ गिआन धिआनु ।। (पृ. ६०५)

गुरबाणी ने यह फैसला कर दिया है कि अन्तर – आत्मा में **'नाम के प्रकाश' द्वारा 'आपा चीन्हे' बिना, हमारा मानसिक मायिकी 'भ्रम' कदाचित मिट नहीं सकता ।**

जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई ।। (पृ. ६८४)

नानक सचे नाम विहूणी भुलि भुलि पछोताणी ।। (पृ. १११११)

भरमु भेदु भउ कबहु न छूटसि आवत जात न जानी ।।
बिनु हरि नाम को मुकति न पावसि डूबि मुए बिनु पानी ।। (पृ. ११२७)

आत्मिक–प्रकाश अथवा **नाम के प्रज्वलित होने पर 'द्वैत–भाव' का 'भ्रम', अलोप होकर, अकाल पुरूष की एक मात्र प्रकाश–रूपी 'ज्योति', सर्व–रही–परिपूर्ण अनुभव द्वारा महसूस होगी ।**

अँधकारु मिटिओ तिह तन ते गुरि सबदि दीपकु परगासा ॥
भ्रम की जाली ता की काटी जा कउ साधसंगति बिसासा ॥ (पृ. २०८)

करमी सतिगुरु भेटीऐ ता सचि नामि लिव लागै ॥
नानक सहजे सुखु होइ अंदरहु भ्रमु भउ भागै ॥ (पृ. ८५१)

नानक गुरमुखि गिआनु प्रगासिआ
तिमर अगिआनु अँधेरू चुकाइआ ॥ (पृ. ८५२)

जिह मंदरि दीपकु परगासिआ अंधकारु तह नासा ॥
निरभउ पूरि रहे भ्रमु भागा कहि कबीर जन दासा ॥ (पृ. ११२३)

यह 'नाम' अथवा 'आत्मिक प्रकाश' हमारे 'अन्तर–आत्मा' में ही प्रज्वलित होना है । इस को **'बाहर ढूँढना' हमारा मानसिक भ्रम–भुलाव है** ।

सभ किछु घर महि बाहरि नाही ॥
बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही । (पृ. १०२)

मन मेरिआ अंतरि तेरै निधानु है
बाहरि वसतु न भालि ॥ (पृ. ५६६)

परंतु हमारी धार्मिक कर्म–क्रिया और पाठ–पूजा आदि सारे धार्मिक साधन, **बाहरमुखी वृत्ति से ही किए जाते हैं**। इन बाहरमुखी साधनों को **ही आत्मिक मंज़िल समझना हमारी मानसिक अज्ञानता का भ्रम–भुलाव है** ।

परंतु हमें अन्तर–आत्मा में ईश्वरीय **'नाम–खज़ाने'** की सूझ ही नहीं, इस लिए प्रयत्न या पुरूषार्थ तो क्या करना था !

इस **अमूल्य आत्मिक 'खजाने' की सूझ** अथवा 'तत्–ज्ञान' **किसी बख्शे हुए विरले गुरमुख प्यारे को ही गुरप्रसादि द्वारा ही अनुभव होती है** ।

इहु जगतु भरमि भुलाइआ विरला बूझै कोइ ॥ (पृ. ५५८)

(समाप्त)